RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-04
April -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

भारतीय कला परम्परा के सच्चे साधक : वीरेन्द्र सिंह 'राही'

Dr. Alka Arya

Asso. Professor and H.O.D, Drg.ptg. Dept. S.S.D.P.C.P.G. College Roorkee, Haridwar Uttarakhand

(Corresponding Author: arya.alka1[at]gmail.com)

कलाएं संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग होती है और मानव मन को सुन्दर व प्रांजल बना पोषित भी करती है। विश्व में अपनी पृथक पहचान बनाने वाली भारतीय कला परम्परा अत्यंत प्राचीन एवं विस्तृत है। प्राचीन भारतीय कला की अलौकिकता और अक्षुण्णता की अविरल धारा कलाकारों के मानस को सदैव परिपोषित करती रही है।

मातृभूमि के प्रति अपरिमित निष्ठा और समर्पण भाव के साथ–साथ अपनी कला व संस्कृति के अथाह सागर में डूब जाने की चाह में भटके प्रेमी की तरह श्री वीरेन्द्र सिंह राही ने अपनी अन्तरात्मा को भारतीयता के सांचे में ढालकर एक विशिष्ट कलाकार के रुप में कला जगत में अपनी पहचान बनाई है। अखण्ड महापुरुषों, वीरों और देशभक्तों की पावन भूमि बुल्देलखण्ड में जन्में तथा गुरु नंदलाल बोस व रामगोपाल विजयवर्गीय की छत्र–छाया में कला शिक्षा ग्रहण करने वाले चित्रकार राही ने भारतीय कला मूल्यों को सर्वोपरि स्थान देते हुए अपनी कला साधना की। यह सत्य है कि अपनी परम्परा की पकड़ जिस कलाकार में नहीं होती, वह सही अर्थो में सच्चा कलाकार कहलाने योग्य नहीं होता। प्राचीन भारतीय कला की जड़े आज आधुनिक कलाकारों को कितना पोषित कर रही है, यह कहना तो कठिन है, किन्तु वरिष्ठ चित्रकार राही के सम्बंध में निर्विवाद रुप से यह कहा जा सकता है कि भारतीय कला की प्राचीन धरोहरों ने उनके शिशुमन को अपनी प्रेरणा के जल से सिंचित और पोषित कर एक सच्चे भारतीय कलाकार को जन्म दिया।

दिल्ली में उनके निवास स्थान पर हुई एक औपचारिक मुलाकात में उन्होंने कहा 'कि मैं तो एक छोटा सा कलाकार हूँ लेकिन भारतीय कला और उसके मूल्य मेरे लिये बहुत महत्वपूर्ण है, जो आपको मेरी कला में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से अवश्य दिखाई देंगे। उनका मानना है कि भारतीय कला और संस्कृति की पृष्ठभूमि को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये यह अनिवार्य है कि अपनी परम्परा के वास्तविक रुप की खोज की जाये और उसमें निहित सौन्दर्यबोध के मर्म तक पहुँचने का प्रयत्न किया जाये। अपनी परम्परा को पूरी तरह पहचानने और उससे घनीभूत सम्पर्क स्थापित कर पाने के बाद ही कोई अपने से बाहर प्रभाव विकीर्ण करने तथा बाहरी प्रभावों को स्वस्थ रीति से ग्रहण करने की शक्ति अर्जित कर पाता है।

वीरेन्द्र सिंह राही का जीवन बचपन से ही संघर्ष पूर्ण रहा। देश भक्ति की भावना और भारतीय संस्कृति से प्रेम उन्हें पैतृक विरासत के रुप में मिले। इसी सोंधी माटी सी महक में उनकी कला का बीजारोपण हुआ और आज यह कलावृक्ष पल्लिवत हो अपनी सुगन्ध और मोहकता से भारतीय कला जगत को सुशोभित कर रहा है। राही की जिन्दगी जहा एक ओर रंगों और रेखाओं के समुन्दर पर तैरती है, वही दूसरी और राष्ट्र की अन्तरात्मा की पुकार को युग की रागिनी में झंकृत कर देती है। वह राष्ट्र के स्वाभिमान के लिये बैचेन है, इसीलिये वह राष्ट्र के इतिहास की मर्यादा की सुरक्षा में पूर्ण सचेतन भी है।[1]

भारतीय कला की टोह में राही सदैव इधर–उधर भटकते रहे। प्राचीन ऐतिहासिक कला स्थलों के भ्रमण में इन्हें भारतीय कला संस्कृति को जानने–समझने और उससे प्रेरणा ग्रहण करने के पर्याप्त अवसर भी मिले। अजन्ता, एलोरा, वाघ, एलिफेंटा आदि गुफाओं का अलौकिक संसार हो या फिर प्राचीन भव्य मूर्तिशिल्प के अद्भुत नमूने, राही ने सुसमृद्ध भारतीय कला का रसपान करते हुए एक लंबी कला यात्रा को पूर्ण किया है। भारतीय कला की साधना में इन्होंने अपना घर–परिवार सब कुछ त्याग दिया था। अपने अतीत का स्मरण करते हुए वें बताते है कि ''मेरा ध्येय केवल भारतीय कला की पिपासा था और शांतिनिकेतन उस समय स्वदेशी कला प्रेमियों की केन्द्र भूमि बना हुआ था। अतः मेरी प्यास मुझे नन्दलाल बोस के पास शांतिनिकेतन ले आई।''[2] कला गुरु नंदलाल बोस के चरणों में आकर भारतीय कला–परम्परा के प्रति इनके प्रेम का और भी विस्तार हुआ।

राही की कला का प्रधान लक्ष्य महान भारतीय कला का प्रचार–प्रसार करना है। वे कहते है कि ''मेरा प्रधान लक्ष्य भारतीय कला है। मैंने भारतीय कला को सच्चे मन से अध्ययन कर आत्मसात किया है। आज भी मैं उसी ओर जा रहा हूँ। अजन्ता एलोरा का मुझ पर गहरा प्रभाव है।''[3]

अपनी कला शिक्षा के दौरान इन्होंने अजन्ता के महान चित्रों की अनेक अनुकृतियाँ तैयार की तथा उनकी विशिष्टताओं को हृदयंगम कर अपनी कला शैली को एक नया मोड़ दिया। अजंता की गतिमान और लयात्मक रेखाओं,

RRIJM 2015, All Rights Reserved

आकर्षक रुप रंगों, अदभुत मुद्राओं और अभिनव भावाभिव्यजंना में उन्हें दिव्य सौन्दर्य की अनुभूति होती है। इसीलिये इन जीवंत रेखाओं के सौन्दर्य से अभिप्रेरित हो इन्होंने असंख्य रेखाचित्रों की रचना कर भारतीय कला की आत्मा को अनुप्राणित किया। अजन्ता के साथ–साथ भारतीय मूर्तिशिल्प के अनुपम सौन्दर्य ने इनके अंतर्मन को सदैव अपनी ओर आकर्षित किया। भारतीय मूर्तिकला की विलक्षण प्रतिमाओं अद्भुत मुद्राओं, उत्कृष्ट भावाभिव्यंजना से परिपूर्ण अलौकिक रुपों की बलिष्ठता, दृढ़ता और ऊर्जा को राही ने अपनी कला में ढालने का प्रयास किया है। विशेष रुप से खजुराहों की श्रृंगारिक, लावण्यमयी और अद्भुत भंगिमायुक्त मूर्तियों के अंग सौष्ठव और लयात्मक लंबे मोड़ों की कलात्मकता को उनके रेखाचित्रों में देखा जा सकता है।

राही ने भारतवर्ष में प्रचलित लघुचित्र शैलियों से बहुत कुछ सीखा। राजस्थान की समृद्ध कला–संस्कृति ने तो इनके अंतर्मन में एक इन्द्रधनुषी आकर्षण पैदा कर दिया। इनका कहना है कि राजस्थान के लोक जीवन, उनकी कहानियों में ऐसी विविधता, शक्ति और प्रभावोत्पादकता है, जो बरबस अपनी ओर खींचती रहती है। 'ढोलामारु' 'रानीहाड़ा' के गीत मुझे आत्मविभोर करते हैं। जब मैं कभी अपने शून्य कैनवस को देखता हूँ, तो ये आकृतियाँ मेरे कैनवस पर अचानक बोलती चली जाती है।[4] वास्तव में राही को राजस्थान की आत्मा से जुड़े हुए कलाकार के रुप में जाना जाता है, वो जो कुछ भी अंकित करते है, उसमें राजस्थान का प्रभाव झलकता है।[5] डा॰ एम॰एस॰रंधावा के अनुसार राही राजस्थान की आत्मा, उसके लोक जीवन और स्थानों को हम तक प्रभावशाली ढंग से पहुँचाने में सक्षम रहे हैं।[6] भारतीय संस्कृति और परम्परा के सच्चे साधक, राही की कला शांतिनिकेतन पहुँच कर बंगाल शैली की प्रेरणा से और भी पुष्ट हो गई थी। इन्होंने बंगाल स्कूल की पारम्परिक आधारशिला पर भारतीय रुप विधान और वस्तुतत्व में सामन्जस्य स्थापित करते हुए सहजता और कल्पना के साथ अपनी सृजनात्मकता का सदुपयोग किया। 'वाश चित्रण' बंगाल शैली की मुख्य विशिष्टता रही है। इसी विशिष्ट पद्धति को आत्मसात कर इन्होंने अपनी कल्पनात्मक अभिव्यक्ति को रहस्यात्मक वातावरण व अंतराल की गहराई द्वारा अद्भुत प्रभाव दिया है। अपने वाशचित्रों में मौलिक प्रयोग करते हुए राही ने बंगाल शैली की परम्परा को पुष्ट किया। जबकि भारतीय कला परम्परा के पक्षधर नंदलालबोस ने टेम्परा तकनीक पर अधिक जोर दिया था।[7] उनका अपने शिष्यों से यही आग्रह था कि अपनी परम्परा तथा अपने ही साधनों को अपनाकर अपनी मौलिक चित्रशैली का विकास करो। फलतः उन्हीं की प्रेरणा से इन्होंने अपने रचना संसार की नींव रखी। भारतीय कला के साथ–साथ इन्होंने विश्व की कलाओं का भी स्वाद चखा, किन्तु स्वदेशी कला सौन्दर्य के आगे सब नगण्य ही लगा। वे कहते है कि ''मैं यूरोप के माँसल सौन्दर्य का कायल नहीं। मैं तो सौन्दर्य की भारतीय अवधारणा का पुजारी हूँ। जीवन के उन रंगों को अपनी कृति में प्रतिष्ठापित करता हूँ जो जिजीविषा को पोषित करते हैं। मेरे लिय`कामुकता का नहीं, भावों का महत्व है। उसी सोंधी–सोंधी माटी का महत्व है, जिसकी महक व्यक्ति और समाज को समाधिस्थ कर दे। तृप्ति और शांति के सागर का अनुभव करा दे।[8]

आज पाश्चात्य और आधुनिक अमूर्त कला की अंधी दौड़ में भारतीय कला परम्परा की उपेक्षा हो रही है। कला की वर्तमान स्थिति पर चिंता व्यक्त करते हुए राही कहते है कि ''भारतीय कला की उपेक्षा हमारे लिये घातक हो सकती है। आज प्रत्येक क्षेत्र की कला और संस्कृति का स्तर गिर रहा है। अब हमारी कला, साहित्य और राजनीति किसी का स्तर पहले जैसा उच्च नहीं रहा, क्योंकि विदेशों की अंधाधुंध नकल हो रही है, और इसके जिम्मेदार हम सब हैं।[9]

निःसंदेह वीरेन्द्र सिंह राही भारतीय कला के पक्षधर, और सच्चे साधक है, किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वे पाश्चात्य कला के विरोधी है। इन्होंने स्वयं मार्डनआर्ट पर आधारित अनेक कलाकृतियाँ बनाई, किन्तु उनकी विषय वस्तु भारतीय परिवेश से जुड़ी रही। वे महान विदेशी कलाकारों का सम्मान भी करते है, लेकिन इस बात से पूर्णतः असहमत है कि हम अपनी कला को भूल कर विदेशों की नकल करना शुरु कर दें। भारतीय कला पर गर्व करते हुए वे कहते है कि हमारे यहाँ भी कोई कम महान कलाकार नहीं हुए। विदेशी कलाकारों ने भी हमारी कला से प्रेरणा ली है। यूरोपीय चित्रकार मॉतिस तो भारतीय कला से अत्यंत प्रभावित था। यह सत्य है कि पाश्चात्य कला के प्रभाव में हमारे महान सृष्टाओं द्वारा निर्मित भारतीय कला परम्परा की छवि धूमिल होती जा रही है। आज विदेशी पर्यटक भारत में ही भारतीय छवि या परम्परा वाले चित्रों को खोजते है, क्योंकि मार्डन आर्ट के अमूर्त रुप से वे अब ऊब चुके हैं। जो लोग विदेशों की भौंडी, कुरुप और सस्ती कला के पीछे भाग रहे हैं, वे शायद जीवन कला की परिभाषा को नहीं जानते। वे जीवन से विमुख है और उनका दृष्टिकोण पलायन वादीहै। जो शिल्पी अपने देश की संस्कृति और जाति की छाप को अस्वीकार करते है और कला की सार्वभौमिकता की दुहाई देते हैं, वे कला के नाम पर धब्बा लगाते है और उसका मजाक उड़ाते है।[10] राही भारतीय कला की प्राचीन शिक्षा पद्धति को भी श्रेष्ठ मानते है और स्वयं को आजकल के आर्टस कालेजों के पैदाइश कलाकारों से अलग मानते हैं, क्योंकि यहां से प्रशिक्षित कलाकारों को यूरोप से खुराक मिलती है। इसलिये उनकी कला में हमारे देश के दर्शन और संस्कृति की झलक नहीं होती। उनकी कलाकृतियों का भारतीय मनीषा और जन जीवन से कोई सरोकार नहीं होता।''

RRIJM 2015, All Rights Reserved

आज वर्तमान युग में जबकि सम्पूर्ण भारतवर्ष के समकालीन कलाकारों पर आधुनिकता का रंग चढ़ रहा है, वहीं राही अपनी कला–परम्परा पोषित करने में विश्वास रखते है। आधुनिक कलाकारों के लिये उनका संदेश है कि अपनी कला–परम्परा को छोड़कर हम कला की ऊचाँइयों तक नहीं पहुँच सकते। जिस प्रकार वृक्ष को पल्लिवत होने के लिये उसे अपनी जड़ों की ओर लौटना होता है, उसी प्रकार कलाकार को प्रतिष्ठित होने के लिये अपनी कला परम्परा की शरण में जाना होगा।[11]

वीरेन्द्र सिंह राही को अपने भारतीय होने पर गर्व है और इसी भारतीय संस्कृति के कला वैभव को वे विश्व में पुनर्स्थापित कर देना चाहते हैं। इनकी कला का प्रत्येक बिन्दु भारतीय कला से उनके प्रेम और विश्वास का प्रतीक है। वे भारतीय कला की प्रतिष्ठा और मूल्यों का सम्मान करते हैं तथा उसी की प्रेरणा से अपनी कलाकृतियों का सृजन करते है। इसीलिये इनकी कला में अजंता की रेखाओं की लचक, भारतीय मूर्तिकला का सौष्ठव, ब्रज व राजपूताने की भाव भंगिमाएं और बुन्देलों के रंग न केवल उनकी कल्पनाओं को साकार कर रहे है, बल्कि भारतीय कला की आत्मा में नवीन प्राणों का संचार भी कर रहे है। उनकी कला मन और रंग–रेखाओं में पाश्चात्य प्रभाव से अछूती शत–प्रतिशत भारतीय है। सन् 1962 में आइफेक्स दिल्ली में प्रदर्शित उनकी कलाकृतियों को देखकर सु–प्रसिद्ध कला आलोचक चार्ल्सफावरी ने कहा था कि ''राही की कला शैली उसकी कहानियाँ और भावनायें सौ प्रतिशत भारतीय है। कैनवस पर अंकित उनके रंग रेखा, गति और संवेग इतने पारम्परिक और भारतीय है कि इस पर कोई टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं है।[12] इसी प्रकार सन् 1972 में ललित कला भवन दिल्ली में हुई इनकी कलाकृतियों को प्रभावित हो एक कला समीक्षक ने लिखा कि 'रफी मार्ग पर ललित कला भवन में राही के सत्रह तैल चित्रों की शैली ही नहीं, चित्रांकन से लेकर उनकी कलाकृतियों की समस्त आधारभूमि पूर्णतः भारतीय है। उसने अपनी कृतियों पर कोई पाश्चात्य प्रभाव आरोपित नहीं किया है, यह बड़े संतोष की बात है। उसकी कृतियों का मन भी भारतीय है, जो अपने ढंग से अपने प्रेमी को याद करता है, जो लयपूर्ण है, बलिदानी है और जो बेगुनाहों का कत्लेआम देखकर चीख पड़ता है।[13] इसी प्रदर्शनी को देख श्री महावीर दास ने कहा कि ''इस कलाकार की प्रमुख विशेषता यह है कि वह आधुनिक है, लेकिन साथ ही वह भारतीय कला की महान परम्पराओं से भी अलग नही है। वह सच्चे अर्थो में राष्ट्रीय कलाकार है।[14]

निःसंदेह वीरेन्द्र सिंह राही आधुनिक युग के उन गिने–चुने कलाकारों में से एक है जो भारतीय कला–परम्परा के तत्वों के साथ अपने सृजन कार्य में संलग्न है। श्री राजेन्द्रगुप्त के अनुसार ''कलाकारों के बीच उठती राजनीति से दूर राही चुपचाप अपने कला कार्य में सक्रिय है। राही भारतीय कला से विशेष अनुराग रखते है। उनका मत है कि भारतीय कला का स्त्रोत आध्यात्मिक है। भारतीय कला कालजयी कविता है, वह देश काल और सीमा से परे है।[15] आज 90 वर्ष की आयु में भी राही निरन्तर अपने कला कार्य से भारतीय कला की सेवा कर रहे हैं। इन्हें अनेक राष्ट्रीय और प्रतिष्ठित पुरस्कारों और सम्मानों जैसे कला श्री अवार्ड, कला रत्न, आइफेक्स वेटरन आर्टिस्ट ऑनर, साहित्य कला परिषद सम्मान, राष्ट्र गौरव सम्मान इत्यादि से सम्मानित किया जा चुका है। भारतीय कला की साधना और आराधना ही उनके जीवन के सर्वोपरि जीवन मूल्य है और वे इसी में ईश्वर के साक्षात दर्शन करते है। भारतीय कला में ही उनका जीवन और उसी के आंगन में इनकी आत्मा विचरण करती है। भारतीय कला के प्रति अपने अनुराग और संवेदनाओं को वे भावुक हो कह उठते हैं कि यदि मैं अपनी कला–परम्परा का काम छोड़ दूंगा तो हो सकता है, मुझमें ग्लानि पैदा हो जाये और मैं जीवित ही न रह सकूं।

सन्दर्भ

1. बनर्जी, बंकिम चंद – 'राही का शिल्पधर्म', नवभारत टाइम्स 24 दिस॰ 1967
2. व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर
3. पूर्वोक्त
4. पूर्वोक्त
5. Kushwah, Rajendra Singh, V.S. Rahi, Rooplekha, January 1984, P-84
6. Kaul, Manohar, Virendra Singh Rahi - The traditionalist Art News, Vol. L111 Sept 1998, P-12, (AIFACS Monthly News letter of Art and Crafts)
7. भटनागर, नैन, बंगाल शैली की चित्रकला, पृ॰ 50
8. गुप्त, राजीव कुमार, सृजन की आजादी से जुड़े सवाल, हिन्दुस्तान, 26 जन॰ 1991
9. व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर
10. 'चातक', कुंवर हरिश्चंद्र देव, प्रतिभावान चित्रकार राही से भेंट, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 18 मार्च, 1962, पृ॰ 20
11. व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर
12. Kaul, Manohar, Virendra Singh Rahi - The traditionalist Art News, Vol. L111 Sept 1998, P-12
13. वीरेन्द्र सिंह राही के चित्रों में भित्ति चित्रकला का प्रभाव, नवभारत टाइम्स, 28 दिस॰ 1967
14. पूर्वोकत
15. गुप्त, राजेन्द्र–सृजन की कोई चहार दीवारी नहीं होती, अमर उजाला, 9 फर॰ 1991

RRIJM 2015, All Rights Reserved